Volume-4, No. II, Aug-2017, pp.Hin.-13-16

जगद्गुरु आदि शंकराचार्य तथा डॉ० राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ० मीनाक्षी शर्मा, शोध पर्यवेक्षक,
मेरठ कॉलेज, मेरठ उत्तर–प्रदेश, भारत।
ममता रानी, शोधार्थिनी
मेवाड़ विश्वविद्यालय चित्तौढ़गढ़, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावनाः–

मानव जीवन में चिन्तन मनन एवं विवेक का जितना महत्व है उतना अन्य किसी वस्तु का नहीं। प्रकृति ने मानव जीवन का निर्माण इस ढंग से किया है कि वह बहुत कुछ सीख सके। इस प्रकार सीखना मानव का स्वभाव है। सीखने की प्रक्रिया जीवन भर चलती है। वस्तुतः मानव जीवन का प्रारंभ ही शिक्षा से होता है, उसकी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। शिक्षा की इस दृष्टि से मानवीय आवश्यकता माना जाता है, क्योंकि इसके द्वारा यथार्थ मानव का निर्माण होता है। मानव का अपने इस यथार्थ स्वरूप को पहचानना ही शिक्षा है। भारतीय शिक्षाशास्त्री शिक्षा को व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आत्मिक विकास की प्रक्रिया मानते हैं। शिक्षा एक ऐसा साधन है जो व्यक्ति और समाज की प्रगति एवं विकास को गति प्रदान करता है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।

विभिन्न कालों और देशों में विभिन्न दार्शनिकों, शिक्षाविदों, सामाजिक तथा राजनैतिक व्यक्तित्व ने शिक्षा के उद्देश्यों तथा कार्यों के बारे में अपने–अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य के अनुसार **"शिक्षा आत्मनुभूति है।"** अर्थात् शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो बालक को आत्मा की अनुभूति कराये। शिक्षा का कार्य व्यक्ति की मुक्ति या हमारी आध्यात्मिक चेतना की ओर से जाना होता है।

डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार **"शिक्षा वह प्रक्रिया है जिससे हम अपनी संस्कृति के अमूल्य तत्वों को बनाये रखते हैं और बेकार के तत्वों को निकाल फेंकते हैं यह स्थायी प्रभाव तथा परिवर्तन की अधिकर्ता दोनों की होती है।"** हमारी प्राचीन कालीन शिक्षा का आध्यात्मिक विकास पर अधिक बल देती है, जबकि आधुनिक शिक्षा मनुष्य का बौद्धिक तथा मानसिक शक्ति के विकास पर अधिक बल देती है। इसका मुख्य सम्बन्ध भौतिक समृद्धि से अधिक है। जबकि भारतीय दर्शन में मानव जीवन की समग्र कल्पना की गई है। व्यक्ति केवल शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक प्राणी नहीं है वरन् वह आध्यात्मिक प्राणी भी है। डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार **"पृथ्वी को जो वरदान प्राप्त हुये थे, वे आज ईष्या, अहंकार, लोभ, मूढ़ता और स्वार्थ के कारण अभिशाप में परिणत हो गये हैं। आज मनुष्य का जो रूप है, उसको देखते हुये लगता है कि वह जीने के योग्य नहीं है। उसे या तो परिवर्तन के लिये प्रस्तुत रहना चाहिये या विनाश का संकट मोल लेना चाहिये।"**

अतः शिक्षा एक पवित्र वस्तु है, जिसके द्वारा मानव लौकिक तथा पारलौकिक हित का सम्पादन करता है।

जगद्गुरु आदि शंकराचार्य के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को आत्मा तथा अंतरात्मा का यथावत् विवेक हो और मनुष्य में इसी विभेदीकरण की समाप्ति का विकास करना ही शिक्षा का कार्य है। इससे स्पष्ट है कि शंकराचार्य में आत्मज्ञान तथा ब्रह्मज्ञान पर सर्वाधिक बल देते हैं।

शिक्षकः–

वेदान्त के अनुसार शिक्षक को ब्रह्मज्ञानी होना चाहिये। उसे निस्वार्थ, निष्पक्ष एवं पूर्णकाय होना चाहिये। वह ब्रह्म दृष्टा होगा। ब्रह्मज्ञानी गुरु जब अपने शिष्य से यह कहेगा कि **'तु वही है या यह आत्मा ब्रह्मा है या मैं ब्रह्म हूँ',** तो शिष्य श्रवण–मनन के द्वारा ब्रह्मा का साक्षात्कार करेगा। अर्थात् गुरु को शिष्य के हित का उद्देश्य करने वाला माना जाता है।

उपनिषदों में गुरु के पास जाने को बार–बार कहा गया है। मुण्डकोपनिषद (1–2–12) में कहा गया है–

तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छते।
सपित्पाणिः श्रोतियं ब्रह्मनिष्ठम्।।

अर्थात् उस नित्य आत्म तत्व को जानने के लिये हाथ में समिधा लेकर श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरु के पास जाना चाहिये। गुरु शास्त्रज्ञ होंगे व अर्थों को जानने वाले होंगे और ब्रह्मा में ही उनकी निष्ठा होगी। ऐसे छात्र ही ब्रह्मा का दर्शन कर सकता है। आचार्य शंकराचार्य ने **'विवेक चूड़ामणि'** में गुरु के विषय में कहा है कि **"प्राज्ञ (स्थिर बुद्धि) गुरु के निकट जाये, जिससे उसके भव–बन्धन की निवृत्ति हो। जो श्रोत्रिय (वेदज्ञ) हो, निष्पाप हो, कामनाओं से शून्य हो, ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ हो, ब्रह्मनिष्ठ हो, ईंधनरहित अग्नि के समान शान्त हो, अकारण दयासिन्धु हो और शरणपन्न सज्जनों के बन्धु हो, उन गुरुदेव की विनीत और विनम्र सेवा से भक्तिपूर्वक आराधना करके, उनके प्रसन्न होने पर निकट जाकर शिष्य अपना ज्ञातव्य पूछे।"**

डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार शिक्षक का उद्देश्य बालक की आत्मचेतना, वैयक्तिकता अपनी संस्कृति में विकास और कर्त्तव्य पालन एवं नागरिकता के गुण में वृद्धि करना ही है। अर्थात् शिक्षा के द्वारा छात्रों में चरित्र, विनय, संयम, समायोजन, देशप्रेम, स्वाभलम्बन, अहिंसा आदि गुणों का विकास करना ही शिक्षा का उद्देश्य है। अध्यापकों से आशा की जाती है कि वे अपना चरित्र आदर्श रखें, क्योंकि विद्यार्थी अध्यापकों के चरित्र का अनुकरण करते हैं। वे अपने चरित्र के द्वारा विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण करते हैं, क्योंकि विद्यार्थियों के लिये उसका महत्व उतना नहीं जो वे पढ़ाते हैं जितना उसका है जो वे हैं। प्राचीन परम्परा पर बल देते हुए उन्होंने एक बार अध्यापकों से कहा था कि **"उन्हें याद रखना चाहिये कि हम इस देश में अध्यापकों को गुरु या आचार्य कहते हैं। आचार्य से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जिसका आचरण उच्च हो।"**

शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक का होना परम् आवश्यक है, बिना शिक्षा के शिक्षा की प्रक्रिया का संचालन नहीं हो सकता है। शंकराचार्य जी के अनुसार शास्त्र पर आधारित गुरु एवं शिष्य से सम्पन्न अतःक्रिया शिक्षा है, शिक्षक ब्रह्मा का उजाला है वह शिष्य का आध्यात्मिक पिता है। **"शिक्षक में विनम्रता, धैर्य, करूणामय, निर्लोभ, पूर्णकाय तथा अहंकार रहित गुण होने चाहिए। शिक्षक का ब्रह्मनिष्ठ होना परम आवश्यक है।"**

डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार शिक्षा के विविध तथ्यों की प्राप्ति में सफलता तथा असफलता शिक्षक वर्ग पर निर्भर करती है। शिक्षक ही वातावरण की पुष्टि करते हैं। शिक्षक समाज में मानव मूल्यों का पूरक बन जाता है। प्राचीन शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक को प्रमुख स्थान प्राप्त था। किसी भी शिक्षण संस्था का महत्व उसके विशाल भवनों, प्रयोगशालाओं एवं अभिकरणों से नहीं होता बल्कि उसका महत्व योग्य शिक्षकों से होता है। डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार शिक्षक का कार्य ज्ञान को एकत्र करना या प्राप्त करना और फिर उसे बांटना। उसे ज्ञान का दीपक बनकर चारों तरफ अपना प्रकाश विकीर्ण करना चाहिये। सादा जीवन उच्च विचार की उक्ति को उसे अपने जीवन में चरितार्थ करना चाहिए। उसकी ज्ञान गंगा सदा प्रवाहित होती रहनी चाहिए। डॉ० राधाकृष्णन ने कहा है कि **"हम किस प्रकार की शिक्षा अपने युवकों को दे सकते हैं, यह बात इस पर निर्भर है कि हम किस प्रकार शिक्षक प्राप्त कर सकते हैं।"**

इस प्रकार डॉ० राधाकृष्णन शिक्षक को चरित्रवान, जिज्ञासु संस्कृति के पोषक, विद्वता एवं विषय में प्रेम आदि गुणों से युक्त देखना चाहते थे।

शिष्य– शंकराचार्य जी के अनुसार शिक्षक शिक्षा का यदि एक ध्रुव है तो दूसरा ध्रुव है शिक्षार्थी। शिक्षार्थी के बिना भी शिक्षा की प्रक्रिया संभव नहीं है। अर्थात् शिक्षार्थी को श्रवण, मनन तथा निदिहासन आदि विधियों का गहन चिन्तन करते हुए शिक्षक में पूर्ण निष्ठा रखनी चाहिए। **छात्र शिक्षक के लिए वही है जो मनुष्य दार्शनिक के लिए है।** वेदान्त दर्शन छात्र को मात्र शरीर नहीं मानता। उसके अनुसार बालक ब्रह्मा है, वह अन्नत शक्ति सम्पन्न है, उसमें अन्नत ज्ञान की क्षमता है। आज जो बालक हमें कक्षा में दिखाई पड़ता है, वह अपने पूर्व–जन्मों के कर्मों के फलस्वरूप अनेक संस्कारों से युक्त है, इसलिये बालकों में व्यक्तिगत भिन्नताऐं हैं और एक बालक दूसरों से अपनी रूचि, योग्यता एवं शरीर से भिन्न है। आधुनिक मनोविज्ञान इसी भिन्नता पर युक्त है और इसी भिन्नता को वह अपने अध्ययन का विषय बनाता है। जगद्गुरु शंकराचार्य के अनुसार शिष्यों में निम्न चार योग्यताओं का होना परमावश्यक है। जो निम्न प्रकार है–

1. **नित्यानित्यवस्तु विवेक**– अर्थात् नित्य और अनित्य वस्तुओं में भेद कर सकने की शक्ति।
2. **वैराग्य**– अर्थात् जिज्ञासा
3. **शमदम**– अर्थात् मन का संयम और इंद्रियों पर नियंत्रण।
4. **मुमुक्षा**– अर्थात् मोक्ष की इच्छा रखना।

छात्रों में व्यक्तिगत भिन्नता भी माया या अविधा के कारण है। अविधा का पर्दा हटते ही शुद्ध आत्मा के

दर्शन होते हैं। छात्र मूल रूप से आत्मा है, वह शुद्ध चैतन्य स्वरूप है।

जब तक छात्रों को ब्रह्मज्ञान नहीं हो जाता तब तक वे इस व्यवहारिक जगत में ही निवास करते हैं और इस दृष्टि से उनका शरीर, जगत सत्य माना जायेगा। अतः जगत में कुशलतापूर्वक जीवन–यापन की शिक्षा उन्हें मिलनी चाहिए। उन्हें कर्म की उपासना, ब्रहम् की शिक्षा क्रमशः मिलेगी, जिससे कि वे उत्तरोत्तर आत्म साक्षात्कार के मार्ग पर आगे बढ़े। अन्ततः उन्हें ब्रहम् ही होना है।

डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार छात्रों की दिशा देना उन्हें ज्ञान और कौशल देने से अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि सही दिशा मिल जाने पर ज्ञान और कौशल अर्जित किये जा सकते हैं। गलत दिशा में केवल ज्ञान और कौशल के मूल्य ही निरर्थक नहीं हो जाते बल्कि वे घातक भी बन सकते हैं। दिशा निर्देशन को लेकर दे हमारी शिक्षण संस्थाओं की कार्य प्रणाली से संतुष्ट नहीं थे, क्योंकि विद्यालयों एवं शिक्षण संस्थाओं का समस्त ध्यान ज्ञान व कौशल पर ही है, जिसके परिणाम स्वरूप उचित दिशा निर्देशन के अभाव में अनुशासन हीनता आदि दुर्गुण उनके अन्दर पैदा होते हैं और सारी शिक्षा को शिक्षा निरर्थक बना देते हैं। ऐसे छात्रों के अनुसार– **"भूत के लिये विश्वासघाती और भविष्य के दुश्मन होते हैं।"** इसकी व्याख्या करते हुए कहते हैं, कि विद्यार्थियों का ध्यान अपनी संस्कृति की ओर आकृष्ट किया जाता।

डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार शिष्य को स्वयं गहन, चिंतन, मनन तथा परिश्रम करने वाला होना चाहिये। छात्रों को अहम ग्रंथों व विचारों का अध्ययन करना चाहिए जिससे उनका मस्तिष्क विस्तृत तथा व्यापक बने।

निष्कर्षः–

उपर्युक्त विवेचन से शिक्षा का स्वरूप आध्यात्मिक एवं धार्मिक होना सिद्ध है। शंकराचार्य के अनुसार आध्यात्मिक ज्ञान से भिन्न कोई शिक्षा नहीं है। अतः शिक्षा की प्रक्रिया एक ऐसी धार्मिक एवं पवित्र प्रक्रिया है जो मुक्तिपर्यन्त चलती है। यही कारण है कि स्वामी शंकराचार्य के शिक्षा दर्शन में आध्यात्मिक शिक्षा को भौतिक शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। जगद्गुरु शंकराचार्य के अनुसार शिक्षा की उपयोगिता व्यक्ति एवं समाज दोनों ही के सन्दर्भ में है। व्यक्ति के लिए शिक्षा को महत्वपूर्ण मानते हुए आचार्य शंकराचार्य का यह कथन उल्लेखनीय है **"शिक्षा से मनुष्य को अमरत्व (मोक्ष) प्राप्त होता है।"** अतः शिक्षा प्राप्त कर लेने पर व्यक्ति का आचरण, विचार तथा व्यवहार सुसंस्कृत हो जाते हैं। उसका जीवन उत्तरोत्तर उत्कृष्टतर हो जाता है, जिससे श्रेष्ठ समाज के निर्माण को बल मिलता है। श्रेष्ठ मानव समाज में ही उन्नत राष्ट्र एवं समृद्ध तथा शान्तिमय विश्व की कल्पना निहित है।

आचार्य शंकराचार्य जीवन और शिक्षा को एकरूप मानते हैं। उनके अनुसार जीवन का वास्तविक स्वरूप आत्मा है और आत्मा ब्रह्म होने से सच्चिदानन्द स्वरूप है। इस प्रकार ज्ञान जीवन का सारभूत तत्व सिद्ध होता है। अतः शिक्षा और जीवन में वस्तुतः पार्थक्य न होकर अभेद है। शंकराचार्य के अनुसार जीवन की अवतारण केवल मात्र भौतिक सुखसमृद्धि का भोग भोगने के लिए ही नहीं हुई है वरन् मानव–जीवन ज्ञानार्जन के लिए है। इस प्रकार आचार्य शंकराचार्य जीवन और शिक्षा के गहन सम्बन्ध को स्वीकार करते हैं और दोनों को परस्पर अन्योन्याश्रित मानकर श्रेष्ठ जीवन को सुशिक्षा का फल स्वीकार करते हैं।

डॉ० राधाकृष्णन् ने वेदान्त सूत्र, छान्दोग्योपनिषद एवं गीता रहस्य से भी अनायास ही प्रभाव को ग्रहण किया। विवेकानन्द जी के व्यक्तित्व से प्रभावित डॉ० राधाकृष्णन् ने 'तर्क विद्या' के साथ 'सहज ज्ञान' को समन्वित किया। ऐतिहासिक दृष्टि से दर्शन के अध्ययन–अध्यापन की शैली का आविष्कार किया। शिक्षा में आप क्या और कैसे ग्रहण कर रहे हैं? हम क्या हैं? यह जो कुछ है क्या है और उसे हम कैसे जानते हैं? इन प्रश्नों का समाधान खोजा गया। इस प्रकार भारतीय विद्या का प्रयोजन मानव जाति के अनुरूप समग्र मानव का विकास हो गया।

डॉ० राधाकृष्णन् भारतीय क्षितिज पर एक ऐसे वैज्ञानिक अध्यात्मवाद के मनीषी के रूप में हुए थे, जिन्होंने व्यक्ति के चरित्र और व्यक्तित्व को पूर्व और पाश्चात्य से जोड़ने का कार्य किया है। विश्वविख्यात दार्शनिक डॉ० राधाकृष्णन् कर्म सिद्धान्त के व्याख्याकार थे। उन्होंने कर्म को विश्व का एक ऐसा तत्व माना है जिसे कम नहीं किया जा सकता। यह न तो द्रव्य है और न गुण ही है। बल्कि अपने आप में एक स्वतंत्र पदार्थ है। उन्होंने हिन्दू–धर्म का प्रमुख आधार अध्यात्मवाद को माना है। उन्होंने अपनी मौलिक अनुसंधान और व्याख्याओं द्वारा भारतीय दर्शन को अखिल दार्शनिक विश्व में ससम्मान प्रतिस्थापित किया। उनके वैदिक–दर्शन विषयक व्याख्यानों ने अध्ययनकर्ताओं पर अपना अधिकाधिक प्रभाव छोड़ा है।

सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सक्सैना, एन०आर० स्वरुप शिक्षा के दार्शनिक व सामाजिक आधार– आर० लाल बुक डिपो, मेरठ।
2. पचौरी गिरीशचन्द्र– शिक्षा के सिद्धान्त–लायल बुक डिपो, मेरठ।
3. मित्तल, प्रो० एम०एल०– उदीयमान भारतीय समाज के शिक्षक– इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
4. दूबे, रमाकान्त– विश्व के कुछ महान शास्त्री–मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
5. लाल, रमन बिहारी– शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त– रस्तोगी पब्लिकेशन गंगोत्री शिवाजी रोड़ मेरठ।
6. पाण्डेय रामशक्ल– शिक्षा की दार्शनिक एवं समाज शास्त्रीय पृष्ठभूमि– विनोद प्रकाशन मन्दिर, आगरा।
7. चौबे, एस०पी०– शिक्षा के दार्शनिक, ऐतिहासिक और समाजशास्त्रीय आधार– इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
8. जायसवाल सीताराम– विश्व के कुछ महान शिक्षक– न्यू बिल्डिंग अमीनाबाद प्रकाशन, लखनऊ।
9. सफाया शैदा, शुक्ला–उदयीमान भारतीय समाज में शिक्षक– आर० लाल बुक डिपो, मेरठ।
10. गुप्त रामबाबू–महान पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षा शास्त्री।
11. रुहेला एस०पी०– विकासेन्मुख भारतीय समाज में शिक्षक और शिक्षा– अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
12. चौबे, डॉ० एस०पी०, चौबे, डॉ० अखिलेश, शिक्षा के दार्शनिक समाजशास्त्रीय आधार (2007) इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ, पृष्ठ– 475–482।
13. गुप्ता, प्रो० आर०पी०, पाण्डे, डॉ० रामशकल, पाश्चात्य एवं भारतीय शिक्षाशास्त्री (2009–10) अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा, पृष्ठ सं०– 176–200, 242–268।
14. लाल, प्रो० रमन बिहारी, पलोड़, सुनीता शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय परिदृश्य (2016) आर0 लाल बुक डिपो, मेरठ पृष्ठ सं०– 125–133
15. श्रीवास्तव, रश्मि, ''डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के शिक्षा चिन्तन की उपादेयता'' भारतीय आधुनिक शिक्षा, जनवरी 2010, एन०सी०ई०आर०टी० ISSN 0972–5636, पृष्ठ सं०– 36–44.
16. श्री शंकराचार्य, "विवेक चूड़ामणि", गीता प्रेस, गौरखपुर, पृष्ठ सं०– 2020
17. आचार्यवान् पुरुषोवेद– "छान्दोग्योपनिषद" (6–4–2) पर शंकर का भाष्य, गीता प्रेस, गौरखपुर, पृष्ठ सं०– 2028
18. मुण्डकोपनिषद शंकर का भाष्य, गीता प्रेस, गौरखपुर, पृष्ठ सं०– 2013
19. शर्मा, डॉ० भीम दत्त– "महान शिक्षा दार्शनिक के रूप में आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य", अनु प्रकाशन, मेरठ
20. डॉ० राधाकृष्णन्– "भारतीय दर्शन", राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, पृष्ठ सं०– 482